कॉलेजों में डिसेक्शन पर रोक

डॉ. सुशील जोशी

हाल ही में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने देश के महाविद्यालयों में जंतुओं के विच्छेदन (आम बोलचाल में डिसेक्शन) पर रोक लगाने का निर्णय लिया है। इस निर्णय के तहत अब स्नातक कक्षाओं के छात्र डिसेक्शन नहीं करेंगे। यह निर्णय मूलतः जंतु अधिकार संगठनों के आग्रह (दबाव) में लिया गया है। इस फैसले पर मिली-जुली प्रतिक्रिया हुई है।

पिछले वर्ष जनवरी में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया था। इस समिति को यह फैसला करना था कि क्या विश्वविद्यालयों व कॉलेजों में डिसेक्शन प्रयोग बंद कर दिए जाएं।

उपरोक्त निर्णय करते हुए विशेषज्ञ पैनल ने स्वीकार किया है कि उपलब्ध शैक्षिक शोध के अवलोकन से इस बात की पुष्टि होती है कि काफी बड़ी संख्या में छात्र जंतुओं के डिसेक्शन व अन्य प्रयोगों को लेकर असहज होते हैं और कई छात्र तो मात्र इसी वजह से जीव विज्ञान लेना पसंद नहीं करते।

पीपुल फॉर एथिकल ट्रीटमेंट ऑफ एनिमल्स (पेटा - जंतुओं के साथ नैतिकतापूर्ण सलूक के पक्षधर) नामक समूह काफी समय से स्कूल-कॉलेजों में डिसेक्शन पर रोक के लिए अभियान चलाता आ रहा है। पेटा का कहना है कि देश के करीब 25 लाख स्नातक व स्नातकोत्तर छात्र प्रति वर्ष अनुमानित 1.9 करोड़ जंतुओं का डिसेक्शन करते हैं। इनमें मेंढक, कॉकरोच, मछलियां, चूहे, केंचुए वगैरह शामिल हैं। जंतु अधिकारों के हिमायतियों का मत रहा है कि यह जंतुओं पर अत्याचार है और बरबादी है।

दूसरी ओर, जीव विज्ञान (खास तौर से प्राणी विज्ञान) के शिक्षक व वैज्ञानिकों का मत रहा है कि जंतुओं का डिसेक्शन करना जीव विज्ञान में शिक्षा का एक अनिवार्य अंग है। मसलन, दिल्ली विश्वविद्यालय के श्री वेंकटेश्वर कॉलेज की वर्तिका माथुर ने *नेचर* को बताया कि "डिसेक्शन अनिवार्य हैं क्योंकि इनसे छात्रों को जंतु शरीर रचना (एनाटॉमी) का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होता है। इस बात का कोई अर्थ नहीं है कि कभी किसी जंतु को हाथ लगाए बगैर आपको प्राणी विज्ञान में उपाधि हासिल हो जाए।" इसी प्रकार से युनिवर्सिटी कॉलेज लंदन की पुराजीव वैज्ञानिक अंजलि गोस्वामी कहती हैं कि डिसेक्शन से आपको "विभिन्न अंगों की जमावट का एक सर्वथा भिन्न परिप्रेक्ष्य मिलता है।"

इसके विपरीत पेटा व अन्य जंतु अधिकार संगठनों का मानना है कि आज के ज़माने में उपरोक्त परिप्रेक्ष्य हासिल करने के कई तरीके हैं जिनमें जंतुओं की हत्या करना ज़रूरी नहीं है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी अपने निर्णय में कहा है कि प्रयोगों में जंतुओं का उपयोग करने की बजाय आधुनिक गैर-जंतु युक्तियों का उपयोग किया जाए। इनमें कंप्यूटर मॉडल का उल्लेख विशेष तौर पर किया गया है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के निर्णय के पीछे प्रमुख कारण यही लगता है कि स्कूल-कॉलेजों में किए जा रहे डिसेक्शन्स की वजह से जंतुओं पर अनावश्यक हिंसा होती है और खास तौर से आज की स्थिति में इसे जायज़ नहीं ठहराया जा सकता जब शारीरिकी ज्ञान हासिल करने के कई वैकल्पिक तरीके उपलब्ध हैं।

वैसे इस मामले में एक और बुनियादी मसला शिक्षा सम्बंधी है। सवाल यह है कि जंतुओं का डिसेक्शन क्यों किया जाता है। बताया जाता है कि इन जंतुओं का डिसेक्शन करके इनकी आंतरिक रचना को समझने-सीखने के पीछे कारण यह है कि इससे छात्रों को मनुष्य शरीर की आंतरिक रचना समझने में मदद मिलती है। इसके पीछे सोच यह है कि जिन जंतुओं का डिसेक्शन किया जाएगा वे मनुष्य से मिलते-जुलते होंगे। क्या यह धारणा हकीकत में अपनाई गई है? क्या मेंढक, कॉकरोच, केंचुए, घोंघे, सीपें, मछलियां वगैरह वे जंतु हैं जिनकी मदद से हम मनुष्य की आंतरिक

रचना का अंदाज़ लगा सकते हैं? दूसरे शब्दों में क्या ये सही मॉडल जंतु हैं?

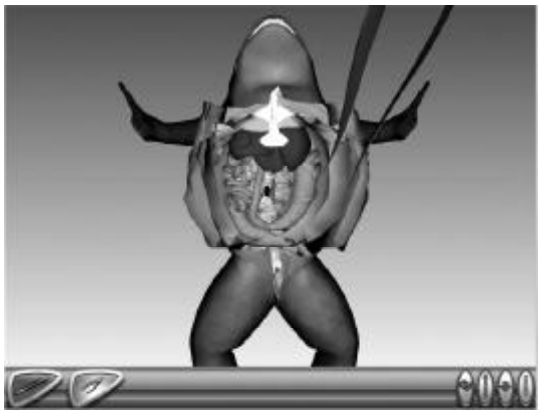

दूसरा सवाल ज़्यादा सामान्य महत्त्व का है। आम तौर पर हमारे यहां (अन्य जगहों का पता नहीं) यह धारणा शिक्षा तंत्र पर हावी है कि छात्र जब पहली कक्षा में दाखिला लेते हैं, तो वे डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, शिक्षक वगैरह सब कुछ बनने वाले हैं। हर बार जब पाठ्यक्रम व पाठ्य वस्तु सम्बंधी फैसले होते हैं तो यह चिंता सर्वोपरि रहती है कि छात्रों को वह सब बताया जाए, जो उन्हें उच्च शिक्षा में उपयोगी हो। यह धारणा विज्ञान की हर शाखा में व्याप्त है।

जैसे रसायन शास्त्र का स्कूली (प्राथमिक या माध्यमिक स्कूली) पाठ्यक्रम तय करते वक्त चिंता यह रहती है कि उन्हें जल्दी से जल्दी परमाणु सिद्धांत पढ़ा दिया जाए, अन्यथा आगे दिक्कत होगी। यह धारणा हर विषय में काम करती है और पिछले कुछ दशकों में इसके परिणाम जानलेवा रहे हैं।

आखिर शरीर की आंतरिक रचना की जानकारी, और वह भी इतनी विस्तृत व पुख्ता जानकारी की ज़रूरत किसे है, किस स्तर पर है? कहा जाएगा कि यदि छात्र को आगे चलकर शल्य चिकित्सक बनना है, तो उसे न सिर्फ आंतरिक शरीर रचना की जानकारी होनी चाहिए, बल्कि उसे इसका प्रत्यक्ष अनुभव भी होना चाहिए। तो क्या जीव विज्ञान चुनने वाले सारे छात्र शल्य चिकित्सक बनने वाले हैं?

शायद हमें यह तय करना होगा कि किसी विषय के अध्यापन के उद्देश्य क्या हैं और फिर अपने तौर-तरीकों को उन्हीं घोषित उद्देश्यों के मद्दे नज़र परिभाषित व विकसित करना होगा।

खास तौर से जीव विज्ञान अध्यापन को लेकर एक बात गौरतलब है। जीव विज्ञान में चीरफाड़ को काफी महत्त्व दिया जाता है। स्कूलों से शुरू करें, तो आपको शायद ही कोई ऐसे प्रयोग नज़र आएंगे जिनमें छात्रों से जीवन का पोषण करने, उसके फलने-फूलने की परिस्थितियों का अध्ययन करने का आग्रह किया जाता हो। जैसे आपको यह प्रयोग नहीं मिलेगा कि तितली या मेंढक या मच्छर के अंडे लेकर उनसे पूर्ण विकसित जीव के विकास का अध्ययन करें। या पौधों के विकास की अनुकूल परिस्थितियों का अध्ययन करें। ऐसे बहुत सुंदर प्रयोग विकसित किए जा सकते हैं जिनसे छात्र जीवों, जीवन और इकॉलॉजी को समग्रता से समझ पाएंगे।

इसके अलावा यह भी परखने की ज़रूरत है कि पाठ्यक्रम में डिसेक्शन सम्बंधी जो प्रयोग शामिल किए गए हैं, छात्र उनसे सीखते क्या हैं। मेरे ख्याल में इस पहलू का अध्ययन नहीं के बराबर किया गया है।

जंतु अधिकार समूहों ने एक अच्छा मुद्दा उठाया है कि जीव विज्ञान सिखाने के नाम पर अनावश्यक रूप से जंतुओं की बलि दी जा रही है। यदि जंतुओं का उपयोग अपरिहार्य है, तो किसी को यह अपरिहार्यता साबित करनी होगी। इसे सिर्फ ऐतिहासिक कारणों से जारी रखने में कोई तुक नहीं है। डिसेक्शन के हिमायतियों को यह बताना होगा कि डिसेक्शन क्यों ज़रूरी हैं, किस स्तर पर ज़रूरी हैं और ऐसे 'ज़रूरी' डिसेक्शन्स के बाद छात्रों के सीखने सम्बंधी क्या परिणाम हासिल होने की उम्मीद है। इसके बाद यह साबित करना होगा कि जिस ढंग से हमारी शिक्षण संस्थाओं में ये प्रयोग किए जाते हैं, क्या उनसे इन उद्देश्यों की पूर्ति होती है। दूसरी ओर, कंप्यूटर मॉडल्स के ज़रिए सिर्फ जीव विज्ञान नहीं, बल्कि समूचा विज्ञान सिखाने के हिमायतियों को भी यह साबित करना होगा कि यह ज्ञान अधकचरा या अविश्वसनीय नहीं होता। ***(स्रोत फीचर्स)***